ISSN: 2349-6002

भारतीय तर्कशास्त्र में न्याय दर्शन का योगदान

निकिता धानाभाई बारड
तत्वज्ञान विभाग, सौराष्ट यूनिवर्सिटी राजकोट

सारांश: यह शोधपत्र भारतीय तर्कशास्त्र के विकास में न्याय दर्शन के योगदान का समग्र एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। न्याय दर्शन को भारतीय दर्शन की तर्कप्रधान परंपरा के रूप में माना जाता है, जिसने ज्ञान, तर्क और प्रमाण की एक सुव्यवस्थित पद्धति प्रदान की। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य न्याय दर्शन में प्रतिपादित प्रमाण सिद्धांत (प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द), अनुमान की संरचना (पंचावयव न्याय) तथा हेत्वाभासों की अवधारणा के माध्यम से भारतीय तर्कशास्त्र की वैज्ञानिकता और तार्किक अनुशासन को स्पष्ट करना है।

शोधपत्र में यह प्रतिपादित किया गया है कि न्याय दर्शन केवल दार्शनिक विमर्श तक सीमित न रहकर, तर्क को ज्ञान-प्राप्ति का विश्वसनीय साधन मानता है। गंगेशोपाध्याय द्वारा प्रवर्तित नव्य न्याय (Navya-Nyāya) परंपरा ने तर्कशास्त्र को अधिक सूक्ष्म, तकनीकी और विश्लेषणात्मक रूप प्रदान किया, जिससे भाषा, अर्थ और संबंधों की दार्शनिक व्याख्या और अधिक स्पष्ट हुई।

यह अध्ययन दर्शाता है कि न्याय दर्शन ने भारतीय तर्कशास्त्र को न केवल दार्शनिक विवादों के समाधान का माध्यम बनाया, बल्कि बौद्ध, मीमांसा और वेदान्त जैसी अन्य दार्शनिक परंपराओं के साथ सशक्त संवाद की आधारभूमि भी निर्मित की। निष्कर्षतः, न्याय दर्शन का योगदान भारतीय तर्कशास्त्र को एक सुसंगत, तार्किक और ज्ञानोन्मुख परंपरा के रूप में स्थापित करता है, जिसकी प्रासंगिकता आज भी अकादमिक एवं बौद्धिक विमर्श में बनी हुई है।

शब्द कुंजी : भारतीय न्यायशास्त्र,प्रमाणमिमासा, प्रत्यक्ष,अनुमान, हेत्वाभास

प्रस्तावना

इस संशोधन पत्र में भारतीय न्याय दर्शन की प्रमाणमीमांसा का विवेचन एवं मूल्यांकन न्याय शास्त्र के प्रमुख ग के आधार पर करने का प्रयास किया गया है जिसमें न्यायसूत्र,वात्स्यायन भाष्य,न्यायवार्तिक, जैसे ग्रंथों में से प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों के स्वरूप का अन्वेषण एवं विवेचन करने का प्रयास किया गया है जिसमें गौतम के न्याय सूत्र में प्रत्यक्ष की परिभाषा दी गई है।

"इन्द्रियार्थसन्निकर्षजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षम् ।

इन्द्रियार्थसन्निकर्षोत्पन्नं ज्ञानमव्यपदेश्यमव्यभिचारि

व्यवसायात्मकं प्रत्यक्षम् - (न्यायसूत्र 1,1,4)

इसका विश्लेषण वास्तपति मिश्र ने न्यायवार्तिक तात्पर्यटिका में इन्द्रियार्थसन्निकर्षोत्पन्नं ज्ञानमव्यपदेश्यम निर्विकल्प प्रत्यक्ष और अव्यभिचारि व्यवसायात्मक सविकल्प प्रत्यक्ष इस प्रमाण मीमासा को विश्लेषणआत्मक संवर्धन प्रदान करने के लिए प्रतिपाद अन्य प्रौढ ग्रंथ में से विश्लेषण एवं विवेचन का प्रयास किया है।

न्याय का अर्थ

साधारणत: बोलचाल की भाषा में न्याय का अर्थ नियम युक्त समझते हैं इस प्रकार नियम युक्त व्यवहार ही न्याय है नियम युक्त व्यवहार ही नियम निष्ठ आचरण कहलाता है इस दृष्टि से हम अपने दैनिक जीवन में न्याय शब्द का प्रयोग नियम युक्त नैतिक उचित आदि अर्थों में करते हैं इसका संबंध व्यक्ति के व्यवहार से लेकर सामाजिक व्यवस्था और न्यायालय के विधान तक से है यह स्पष्ट होता है कि न्याय शब्द का अर्थ व्यापक है साधारणत: गौतम मुनि को ही भारतीय तर्कशास्त्र का गुरु माना जाता है इसका अर्थ यह नहीं लगना चाहिए कि गौतम मुनि के पहले भी वेद और उपनिषद काल में लोग वाद विवाद किया करते थे। इसीलिए भारतीय तर्कशास्त्र का समय वैदिक काल की बतलाया जा सकता है और इस दृष्टिकोण से भारतीय

ISSN: 2349-6002

विद्वानों का आज यह दावा है कि भारतीय तर्कशास्त्र का इतिहास संसार में सबसे प्राचीन है।

भारतीय तर्कशास्त्र को सुव्यवस्थित तथा नियमित बनाकर एक शास्त्र के रूप में बनाने का श्रेय गौतम मुनि को ही जाता है। तर्कशास्त्र की व्याख्या को बृहद करने के लिए ही महर्षि गौतम ने न्याय दर्शन की रचना की है। महर्षि गौतम तर्कशास्त्र के शब्द का प्रयोग नहीं कर पुकारा जाता है न्यायशास्त्र को हम न्याय दर्शन के एक प्रमुख अंग के रूप में जाने जाते हैं।

इस प्रकार न्याय शास्त्र का इतिहास महर्षि गौतम से प्रारंभ होता है जिन्होंने न्याय सूत्र लिखा है इस पर महर्षि वात्स्यायन का प्रमाणिक भाष्य है जिसे न्याय भाष्य कहते है।

न्याय दर्शन में प्रमाण सिद्धांत

न्याय दर्शन ने ज्ञान के चार प्रमाण स्वीकार किए हैं

1 प्रत्यक्ष:

प्रत्यक्ष वह ज्ञान है जो इंद्रियों और वस्तु के संपर्क से उत्पन्न होता है न्याय दर्शन में प्रत्यक्ष को सबसे प्राथमिक और विश्वसनीय प्रमाण माना गया है।

प्रत्यक्ष प्रमाण के भेद को निम्नलिखित तालिका में दिखाया जा सकता है

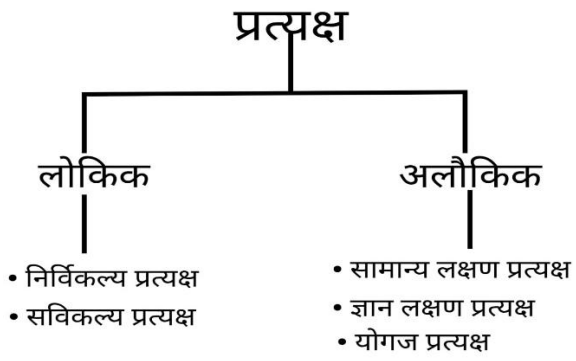

लौकीक के दो भेद दिए गए हैं

1. निर्विकल्प प्रत्यक्ष: बिना नामरूप, बिनाभेद के सीधा अनुभव

उदाहरण = दूर से कोई आकृति दिखाना यह न जानना कि वह क्या है

2.सविकल्प प्रत्यक नाम रूप और गुण सहित स्पष्ट ज्ञान

उदाहरण= "यह गाय हैं" "यह लाल फूल है"

अलौकिक प्रत्यक्ष:

जिस ज्ञान में सामान्य इंद्रिय संपर्क नहीं होता फिर भी ज्ञान होता है उसे और लौकिक प्रत्यक्ष करते हैं

अलौकिक प्रत्यक्ष के तीन भेद है

1.सामान्यलक्षण प्रत्यक्ष= विशेष वास्तु के माध्यम से उसके सामान्य जाति का ज्ञान

उदाहरण एक गाय को देखकर "गौत्व"का ज्ञान

2.ज्ञानलक्षण प्रत्यक्ष= एक ज्ञान के द्वारा दूसरे ज्ञान का होना

उदाहरण चंदन को देखकर उसकी सुगंध का ज्ञान

3.योगज प्रत्यक्ष= योग साधना से प्राप्त असाधारण ज्ञान

उदाहरण योगी द्वारा भूत -भविष्य का ज्ञान

2) अनुमान:

अनुमान न्याय दर्शन का दूसरा प्रमाण है अनुमान शब्द का विश्लेषण करने पर इस शब्द को दो शब्दों का योगफल पाते हैं वेदों शब्द है अनु +मान =अनुमान अनु का अर्थ पश्चात और मान का अर्थ ज्ञान होता है। अनुमान का अर्थ है वह ज्ञान को एक ज्ञान के बाद आये।

पहाड़ पर धुएं को देखकर वहां आग होने का अनुमान किया जाता है। इसीलिए गौतम मुनि ने अनुमान को तत्वप्रवकं प्रत्यक्ष मूलक कहा है।

प्रयोजन के आधार पर भेद

1.स्वार्थानुमान =

जो अनुमान अपने ज्ञान के लिए किया जाए।

उदाहरण: पर्वत धुआं देखकर स्वयं यह जानना कि वहां आग है।

2 परार्थानुमान =

जो अनुमान दूसरा को समझने के लिए किया जाए।

इसमें पंचायाम वाक्य का प्रयोग होता है

1)प्रतिज्ञा - अनुमान द्वारा जिस वाक्य को हम सिद्ध करना चाहते है उसे प्रतिज्ञा कहते है।

उदाहरण= पर्वत पर आग है।

2) हेतु - अपनी प्रतिज्ञा को सिद्ध करने के लिये जो युक्ति दी जाती है उसे हेतु कहा जाता हैं

क्योंकि पर्वत पर धुआं है।

3) उदाहरणसहित व्याप्ति वाक्य -

जिस उक्ति के आधार पर साध्य को प्रमाणित किया जाता है

जहां जहां धुआं है,वहां वहां आग है (रसोई)

4) उपनय -

उदाहरण के साथ हेतु और साध्य का व्यापक संबंध दिखलाने के पश्चात अपने पक्ष में उसे दिखलाना ही उपनय कहा जाता है

यह पर्वत धुआं वाला है।

5) निगमन -

पर्वत पर आग है। इसे ही हम आरंभ में सिद्ध करने चले थे।जब तक इसे सिद्ध नहीं किया जाता हे यह प्रतिज्ञा कहलाता है और जब यह सिद्ध हो जाता है तो इसे निगमन कहा जाता है।

प्राचीन न्याय के अनुसार अनुमान के तीन प्रकार माने गए है।

1) पूर्ववत अनुमान:

जिसमें ज्ञात कारण के आधार पर अज्ञात कार्य का अनुमान किया जाता है।उदाहरण आकाश में काले बादल को देखकर वर्षा का अनुमान करना

2) शेषवत अनुमान:

जिसमें ज्ञात कार्य के आधार पर अज्ञात कारण का अनुमान किया जाता है

उदाहरण प्रांत काल चारों ओर पानी जमा देखकर रात में वर्षा के हो चुकने का अनुमान करना

3) सामान्यतोदृष्ट:

जिसमें दो वस्तुओं को साथ साथ देखे तब एक को देखकर दूसरे का अनुमान करना सामान्यतो दृष्ट है।

नव्य न्यायिकों के अनुसार अनुमान के तीन भेद है

1) केवलानवयी -
जब व्याप्ति की स्थापना भावनात्मक उदाहरण से होती है तब उस अनुमान को केवलान्वयी कहते है। अन्वय का अर्थ है साहचर्य ।एक की उपस्थिति रहने पर दूसरे का उपस्थित रहना अन्वय कहलाता है

उदाहरण: पर्वत ज्ञेय है क्योंकि यह अभिज्ञेय है।

2)केवलव्यतिरेकी:

जिस अनुमान में व्याप्ति की स्थापना निषेधात्मक उदाहरण के द्वारा संभव हो उस अनुमान को केवलव्यतिरेकी कहते हैं

उदाहरण: पृथ्वी गंधवती इतरभेदान

3)अन्वय-व्यतिरेकी:

जिस अनुमान में व्याप्ति अन्वय (सकारात्मक सहचर्य) और व्यतिरेक (नकारात्मक सहचर्य) – दोनों के द्वारा सिद्ध होती है, उसे अन्वय-व्यतिरेकी अनुमान कहते हैं।

उदाहरण:पर्वत में अग्नि है क्योंकि वहां धुआं है।

ISSN: 2349-6002

हेत्वाभास

साधारणतः हेत्वाभाष का अर्थ हेतु का आभास है । अनुमान हेतु पर ही निर्भर करता है । हेतु में कुछ दोष हो तो अनुमान दूषित हो जाएगा ।अनुमान साधारणतः गलती हेतु के द्वारा ही होती है । इसलिए अनुमान के दोष हेत्वाभाष कहा जाता है।

—> न्याय तर्कशास्त्र में पांच प्रकार के हेत्वाभाष माने गए हैं।

1)सव्यभिविचार सव्यभिविचार दोषतीन प्रकार के होते हैं

साधारण:- शब्द: नित्य प्रमेयत्वात।

असाधाराण:- शब्द: नित्य शब्दात्वत।

अनुपसंहारी:- सर्व दु:खम क्षणिकत्वात।

(२) विरुद्ध:-

जब हेतू साध्य को नहीं सिद्ध करके उसके विरोधी को ही सिद्ध कर देता है तब विरुध्य हेत्वाभाष होता है ।

(३) सतप्रतिपक्ष (प्रकरणसम) शब्द नित्य श्रूयत्वात।

(४) अशिध्ध- अशिध्ध के तीन भेद होते हैं।

- आश्रियाश्रित - गंगनारविद
- स्वरूयासिद्ध - शब्द नित्य दर्शयत्वात
- व्यापत्यव्या असिद्ध- पर्वत मे अग्नि है क्योंकि वहा धुआँ है।

५- बाधित (कालात्यीयापदिष्ट)

अग्नि ठंडी है क्योंकि वह जल से बनी है।

3) शब्द:

नैयायिको ने शब्द को भी प्रमाण माना है । किसी विश्ववस्त्र व्यक्ति के कथनानुसार जो ज्ञान प्राप्त होता है उसे शब्द कहते हैं किसी विश्वासी पुरुष के कथनों को आप्तवचन कहा जाता है । कोई व्यक्ति आप्त पुरुष तभी कहा जाता है जब उसके ज्ञान यथार्थ हो। न्याय सूत्र में शब्द की यह परिभाषा है " आप्तोपदेश: शब्द:। वेद पुराण,ऋषि,धर्मशास्त्र इत्यादि से जो ज्ञान प्राप्त होता है उसे शब्द ज्ञान कहा जाता है। सर्वप्रथम शब्द को दो हिस्सों में बांटा गया है

(१) दष्टार्थ (२) अदष्टार्थ।

(१) दष्टार्थ शब्द का अर्थ है ऐसे शब्द का ज्ञान जो संसार के प्रत्यक्ष की ज्ञान सकने वाली वस्तुओं से संबंधित हो -->उदाहरण - यदि कोई व्यक्ति हमारे सामने हिमालय पहाड़ की बात रखता है

(२) अदष्टार्थ - जो प्रत्यक्ष नहीं कि जाने वाली वस्तु से संबंधित हो उसे अदष्टार्थ शब्द कहा जाता है।

नैयायिकोके अनुसार अर्थपूर्ण शब्दों के संयोग से वाक्य बनता है। वाक्यों को सार्थक होने के लिए चार शर्तों का पालन आवश्यक माना गया है वह है

१-आकांक्षा

२- योग्यता

३ - सन्निधि

४-तात्पर्य

4) उपमान:

न्याय दर्शन में उपमान को एक प्रमाण माना गया है उपमान के द्वारा जो ज्ञान की प्राप्ति होती है उसे उपमिति कहते हैं जैसे मान लीजिए किसी आदमी को यह ज्ञान नहीं है कि नीलगाय किस प्रकार की होती है परंतु कोई विश्वास ही क्योंकि उसे कह देता है कि नीलगाय गाय के ही सदस्य होती है यह व्यक्ति जंगल में जाता है और वहां इस प्रकार का पशु अधिक पड़ता है तब वह तुरंत समझ जाता है कि यह नीलगाय है यह ज्ञान को उपमान कहते हैं।

उपमान प्रमाण के अवयव

१)संज्ञा

२) सादृश्य

३)संज्ञा-संज्ञी संबंध का ज्ञान

निष्कर्ष

इस संशोधन पत्र में यह प्रतिपादन करने का प्रयास किया है| कि भारतीय तर्कशास्त्र में न्याय दर्शन का योगदान अनन्य एवं सातत्य पूर्ण रहा है यह न्यायदर्शन की ही देन है कि प्रमाण मीमांसा भारतीय तत्वज्ञान में एक केंद्रवर्ती आयाम बन चुकी है न्याय दर्शन का प्रत्यक्ष प्रमाणऔर विशेष: अनुमान प्रमाण उसकी पारिभाषिक शब्दावली में प्राय: सभी दर्शन प्रणालीओमे स्वीकृत है |इसमें भी गंगेरा उपाध्याय से प्रारंभ हुई नव्यन्याय की परंपरा उत्तरकाल में भारतीय तर्कशास्त्र में पर्यायवाची बन गई है| और चितसुखी एवं सिद्धि जैसे शंकरोत्तर वेदांत के ग्रंथ नव्य न्याय की परिभाषा में ही अपने स्थापनाओ एवं तर्कों का निरूपण तथा समर्थन करते हैं| इस लिए यह कहा जा सकता है कि भारतीय तर्कशास्त्र का जो विकास हुआ उसमें न्याय दर्शन का योगदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण रहा है | वर्तमान संशोधन की अवस्था पर यह दृष्टिपात किया जाए तो ऐसा लगता है कि नव्य न्याय का समकालीन परिप्रेक्ष्य में अध्ययन एवं निरूपण आवश्यक है और वर्तमान तर्कशास्त्र की स्थिति में भारतीय तर्कशास्त्र क्या भूमिका रहती है और भारतीय तर्कशास्त्र को किस दिशा में अपना योगदान देना चाहिए | यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण संशोधन आयाम है| तो इस संशोधन पत्र के क्षेत्र से अति क्रमित होने के कारण इस विचार को भविष्य के किसी के मे लिए सुरक्षित रखती हूं|

संदर्भ ग्रंथसूची

[1] न्यायसूत्र गौतम (१,१,४)
[2] तत्वचिंतामणि गंगेश उपाध्याय (१,१,३)
[3] प्रमाण मीमांसा (डॉ बद्रीनाथ सिंह)आशा प्रकाशन,वाराणसी १९९९
[4] भारतीय दर्शन (प्रो उमेश मिश्र)प्रकाशक उतर प्रदेश संस्थापक,लखनऊ,सन १९५७
[5] भारतीय दर्शन आचार्य बलदेव उपाध्याय
[6] तर्कभाषा केशवमिश्र, सम्पा, डि,आर, भण्डारकर निर्णय सागर प्रेस मुम्बई १९३७
[7] तर्कभाषा केशवमिश्र अनु, बद्रीनाथशुकत्व, भोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी,१९७६
[8] न्यायकुसुमानंली उदयनाचार्य सं, प्रो, महायभुलाल गोस्वामी, मिथिला शोध संस्थानम, परभंगा १९७२